डॉ. महेश प्रसाद सिन्हा
प्रधानाचार्य सह ऐसोसिएट प्रोफेसर
हिन्दी विभाग, सी.एम.जे.कॉलेज दोनवारीहाट खुटौना,मधुबनी– 847227
Email ID : principalcmjcollege@gmail.com Web: www.cmjcollege.com Mob. No- 8544513344

हिन्दी प्रतिष्ठा के छात्रों के लिए ऑनलाइन वर्ग–कक्षा (दिनांक–08 अप्रैल, 2020)

संत काव्यधारा में कबीर का स्थान

संत काव्यधारा का मूल स्रोत सिद्धों–नाथों की वाणियों में अभिव्यक्त है। इस धारा के प्रमुख स्रोत गोरखनाथ हैं। गोरखनाथ की 'हठयोग–साधना' तथा षंकराचार्य के 'अद्वैतवाद' दर्षन का सीधा प्रभाव संत काव्यधारा पर है। भक्तियुग की परंपरा में कबीर से पूर्व नामदेव की पदावली की चर्चा मिलती है। बावजूद इसके कबीर संत काव्यधारा के मुख्य प्रवर्त्तक तथा विद्रोही एवं क्रांतिकारी कवि के रूप में माने जाते हैं। उस युग के समाज और लोक पर व्यापक प्रभाव डालने वाले संत कबीर थे। उनके व्यक्तित्व में प्रेम, मनुष्यता या मानवतावाद तथा हिन्दू–मुस्लिम एकता की भावनाओं का समन्वय मिलता है। हिन्दू–मुस्लिम संस्कृति को आत्मसात करने के कारण उनके साहित्य में दोनों ही संस्कृति के बिंब, प्रतीक, उपमान आदि मौजूद हैं। उनका संत स्वभाव अक्खड़ मिजाजी था। घुमन्तु उपदेषक होने के कारण उनकी भाषा में अनेक भाषा–बोली का घालमेल तथा अक्खड़पन मिलता है। कबीर की संपूर्ण रचना 'बीजक' और 'कबीर ग्रंथावलियों' में संपादित है।

कबीर के जन्म को लेकर अनेक विवाद हैं। उनके समय को लेकर विवाद कम है। अधिकांष विद्वानों की सहमति है कि उनका जन्म सन् 1398 (विक्रम संवत 1455) को हुआ और मृत्यु 1518 ई0 (विक्रम संवत 1575) में। माना जाता है कि काषी के घाट की सीढ़ी पर कबीर सोये थे और उनके षरीर पर रामानंद के पैर पड़ गये थे। रामानंद के मुँह से अचानक 'राम' का नाम निकल पड़ा और कबीर ने उस 'राम' नाम को दीक्षा मंत्र समझकर उन्हें अपना गुरु स्वीकार कर लिया था। ध्यान रहे यह किंवदंती है, इसका कोई साक्ष्य मौजूद नहीं है। जिस पंक्ति को आधार बनाया जाता है, उसे कबीर की पंक्ति कहना हास्यास्पद दिखता है। क्योंकि गुरु और षिष्य के सिद्धांत, व्यवहार और साहित्य दर्षन में छतीस का आँकड़ा देखा जा सकता है। पंक्ति देखें

काषी में हम प्रकट भये हैं रामानंद चेताये।
समरथ को परवाना लाये हंस उबारन आयेर।।

वही काषी है, जिसे छोड़कर अंत समय में कबीर ने मगहर जाना उचित समझा था। उन्हें काषी और उसकी पूरी वाह्याडंबर की परंपरा से चिढ़ थी। वही काषी और रामानंद, जिनके ब्राह्मणवाद तथा ब्राह्मण धर्म या हिन्दु धर्म के खिलाफ कबीर ने विद्रोह किया था। क्या ऐसी स्थिति में रामानंद को वे अपना गुरु स्वीकार कर सकते थे ? काषी में प्रकट होने की खुषी उन्हें कभी नहीं थी। इसलिए यह तथ्य अपने आप में विरोधाभास पैदा करता है।

हजारी प्रसाद द्विवेदी का मानना है कि 'कबीर जन्मजात प्रतिभाषाली थे। अनपढ़ और निरक्षर होने के बावजूद उनके समक्ष कोई निपुण और तेजस्वी पंडित या विद्वान न टिक सके। सबके सब भूमिगत हो गये और मूल रचना की जगह टीका लिखने लगे। सब के सब धराषायी हो गये और किंकर्तव्यविमूढ़ थे।'

सिद्ध पुरुष और सत्य वाचक के रूप में चारों ओर कबीर की ख्याति फेल गयी। बड़े पैमाने पर हिन्दू–मुस्लिम दोनों धर्मों के लोग उनके षिष्य बने। मुल्ला और पंडित उनके खिलाफ थे। फिर भी वे निर्भय होकर अपना कार्य करते रहे। उनके षिकायतों के बावजूद तत्कालीन सम्राट सिकन्दर लोदी उनकी बातों से बेहद प्रभावित हुए और उन्हें किसी प्रकार से अहित नहीं किया। कबीर की वाणियों को देखने से पता चलता है कि कबीर साक्षर और पढ़े लिखे थे। पर उनकी पंक्तियों के अर्थ को मान लेने से स्पष्ट होता है कि वे अनपढ़ और निरक्षर थे–

'मसि कागद छुयो नहीं, कलम गहि नहीं हाथ।'

बावजूद इसके उनके द्वारा मौखिक रूप से रचित वाणियों को देखने से उनकी काव्य प्रतिभा का पता चलता है। उनकी समग्र रचनाएं तीन भागों में मौजूद हैं– 'साखी', 'सबद' और 'रमैनी'। 'साखी' में प्रेम और जीवन संबंधी उपदेष तथा अध्यात्म टाईप बातें वर्णित हैं। 'सबद' में योग साधना और भक्ति शव के पद हैं। रमैनी में दार्षनिक विचार हैं। कबीर ने अपने समग्र जीवन काल में उच्च आध्यात्मिक जीवन का उपदेष दिया। उनका मूल उद्देष्य जीवन में प्रेम के मर्म के साथ मनुष्यता और हिन्दू–मुस्लिम एकता स्थापित करना था। एक ऐसे सामाजिक परिवर्तन की परिकल्पना उनके मन में थी, जिसमें धर्म, जाति, संप्रदाय, बर्बरता और ईष्वर न हो। इस सामाजिक परिवर्तन के लिए उन्होंने गोरखनाथ की साधना और षंकर के अद्वैत दर्षन को अंगीकार किया। इसी से उनकी मान्यता थी ईष्वर एक है और वह संपूर्ण सृष्टि के कण–कण में विराजमान है। वह प्रत्येक मनुष्य के ह्रदय में इंसानियत भाव में विराजमान है। कबीर की वाणी में प्रेम और सौंदर्य की विराटता है, जिसे सूफी प्रेमतत्व का प्रभाव माना जा सकता है। उन्होंने प्रेमरस में पग कर लिखा –

भींजै चुनरिया प्रेमरस बूंदन।
आरत साज के चली है सुहागिन प्रिय अपने को ढूंढन।

समाज में क्रांतिकारी परिवर्तन लाने के लिए उन्होंने ऐसे त्यागी और बलिदानी लोगों को आगे आने के लिए आह्वान किया जो अपना घर, संसार, माया, मोह त्यागकर निस्वार्थ भाव से नये समाज का निर्माण करना चाहते हैं। वे अपने उपदेषों से एक निस्पृह, फक्कड़, साहसी और निर्भिक समुदाय तैयार किये। उन्होंने डंके की चोट पर आम लोगों से क्रांतिकारी समुदाय में जुड़ने के लिए ललकार भरे षब्दों में कहा–

कबिरा खड़ा बजार में लिए लुकाठी हाथ।
जो घर जारे आपनो, चले हमारे साथ।।

विद्वानों की राय में कबीर ने वैष्णव मत, योग साधना और सूफी प्रेमतत्व का सामंजस्य कर प्रेम और सौंदर्य की जो धारा प्रवाहित की उससे एक पवित्र स्वच्छ जीवन का मार्ग प्रषस्त हुआ। सामाजिक कुरीतियों एवं विकारों को समाज से दूर करने का विचार पैदा कर उन्होंने जीवन के उदात्त तत्वों को ग्रहण करने का संदेष दिया।

कबीर मूर्ति पूजा, छापा–तिलक और समाज में फैले वाह्याचार के घनघोर विरोधी थे। उनका मानना था कि यह सब पंडितों और मुल्लाओं का ढोंग है। वे इस तरह की कुरीतियों को फैलाकर लोगों को ठगने का काम करते हैं। इसके लिए वे सामाजिकों के बीच धर्म और ईष्वर का खौफ पैदा करते हैं। यही कारण था कि कबीर एक तरफ हिन्दुओं को लताड़ते थे तो दूसरी ओर मुसलमानों को फटकारते थे। उन्होंने दोनों धर्मों में फैली कुरीतियां और वाह्यचारों को एक साथ चुनौती देने का काम किया। एक तरफ उन्होंने हिन्दुओं के विवेक पर प्रहार करते हुए कहा–

'पाहन पूजै हरि मिलै, तो मैं पूजुँ पहाड़।'

वहीं दूसरी ओर उन्होंने मुसलमानों के दिल–ओ–दिमाग पर चोट करते हुए कहा–

काँकड़–पाथर जोड़ि के, मस्जिद लिया बनाय।
ता चढ़ मुल्ला बाँग दे, क्या बहरो भयो खुदाय।।

कबीर की निर्भिकता उनके व्यक्तित्व और अस्तित्व की एक पहचान है। कहते हैं समाज में प्रचलित रूढियों एवं वाह्याडंबरों का खुला विरोध करने और पंडित–मुल्लों का भांडा फोड़ने के कारण पंडित और मुल्ला कबीर से काफी नाराज थे। इसी से सिकन्दर लोदी के काषी आगमन पर उनसे इन लोगों ने कबीर की जमकर षिकायत की। सिकन्दर लोदी ने बगैर सोचे आव देखा न ताव और अपने सिपाही को भेजकर कबीर को बुलवाया। पर सुबह बुलाये गये कबीर तत्क्षण राजा की बात न मानकर षाम को पहुंचे। उनके द्वारा बादषाह के त्वरित आदेष का पालन न करने से सिकन्दर लोदी आग–बबूला हो गये और उसने कबीर से पूछा 'तुम इतनी देर से क्यों आये हो'। कबीर ने निर्भिकता से जवाब दिया, 'मैंने एक अद्भुत आष्चर्य देखा कि सूई के छेद से हाथी, घोड़े, ऊँट, पर्वत सब निकलते चले जा रहे हैं। इस आष्चर्य को मैं अभिभूत होकर देखता रहा और षाम हो गयी।' बादषाह ने उस आष्चर्य को देखने के लिए चलने को तैयार हुआ तो कबीर ने कहा, 'वह दृष्य आप यहीं से देख सकते हैं। आपकी आँख की पुतली एक सूई के छेद के बराबर है, परन्तु आप उससे हाथी, घोड़े, ऊँट, पर्वत सब देख सकते हैं, सब उसमें समा जाते हैं।' सिकन्दर लोदी उनकी बातों से काफी प्रभावित हुए और उन्हें ससम्मान वापस भेज दिया। इससे उनकी निर्भिकता का परिचय मिलता है।

निर्भिकता के साथ कबीर में विलक्षण मस्ती और फक्कड़पन देखने को मिलता है। वे किसी भी बादषाह को षहंषाह मानने के लिए तैयार नहीं थे। उनकी दृष्टि में वही षहंषाह हो सकता है, जिसे किसी से कुछ लेना–देना नहीं है। वे अपने मन के बादषाह थे। उनका जीवन अत्यंत सरल और सात्विक था। उन्होंने लिखा भी है–

'चाह गई चिंता मिटी, मनुआ बेपरवाह।
जको कछु न चाहिए, सोई साहनसाह।।'

संत काव्यधारा में भगवान से अधिक गुरु का महत्त्व है। गुरु का महत्त्व इसलिए कि वे जीवन और ईष्वर के गूढ़ रहस्यों पर से परदा उठाते हैं। उनका गुरु इंसानियत बोध से लैस है। वह किसी का अहित नहीं कर सकता बल्कि मानव जीवन तथा इंस़ान को गढ़कर समाज को नयी गति व नयी दिषा देता है। कबीर ने लिखा है –

'गुरु गोविन्द दोऊ खड़े, काके लागूँ पाँय।
बलिहारी गुरु आपने जिन गोविन्द दिया बताय।।'

कबीर निर्गुण निराकार ब्रह्म के उपासक थे। षून्य में ईष्वर की प्राप्ति की परंपरा उन्हें गोरखनाथ की हठयोग साधना से मिली थी। साधना में अष्टचक्र की अवस्था को पाते ही साधकों को ईष्वर का साक्षात होने की प्रक्रिया थी। यह एक कठोर प्रक्रिया थी, जिसे केवल साधक ही कर सकते थे। यह सामान्य जन की पहुंच के बाहर था। इसलिए कबीर ने उस षून्य की विराटता को समग्र संसार में इंसानियत बोध में परिवर्तित किया तथा ईष्वर को समस्त प्रकृति, गोचर–अगोचर, जड़ और चेतन सबमें ईष्वर की अनुभूति को स्थापित किया। इससे पूर्व ईष्वर की अनुभूति और दर्षन सामान्य जनों के लिए नहीं था। इसी संदर्भ में उन्होंने प्रत्येक मनुष्य के हृदय में ईष्वर के होने को प्रतिष्ठित किया। यह उस जमाने के लिए एक बड़ी घटना थी। क्योंकि उच्च वर्ग ही केवल मंदिर में

प्रवेष कर ईष्वर का दर्षन कर सकते थे। हिन्दुत्व और ब्राह्मणवाद का बखेरा या व्यवस्था का जाल इतना बड़ा था, जिसमें निम्न वर्ग या जनसाधारण के लिए मंदिर में प्रवेष वर्जित था। ईष्वर का दर्षन वर्जित था। वेदों का अध्ययन और श्रवण वर्जित था। ठाकुर के कुएं पर पानी पीना वर्जित था। लोग नदी–तालाब और गड्ढे में जमें हुए गंदा पानी पीने के लिए विवष थे। हिन्दुओं और हिन्दुओं के बीच के इस तरह के विभेदों से आम जनता त्रस्त थी। ऐसे में कबीर की यह वाणी कि अरे ईष्वर की खोज कहां करते हो ? वे काबा–कैलाष और मंदिरों–मस्जिदों में नहीं, बल्कि वे तो सबके हृदय में निवास करते हैं। इसका तत्कालीन परिस्थिति में जनजीवन पर व्यापक प्रभाव पड़ा। कबीर जनता के लिए विराट ईष्वर की तरह दिखायी पड़ने लगे। वे हिन्दु, मुस्लिम, सिख, ईसाई सभी के लिए महान संत और साधक के रूप में लोकप्रिय हुए। कबीर ने सबके लिए कहा –

'घट–घट में वह सांई रमता,
कटुक वचन मत बोल रे।'

इस प्रकार हम देखते हैं कि निर्गुण संत काव्यधारा के प्रवर्तक संत कवि कबीरदास पूरे भक्तियुग में एक महान क्रांतिकारी कवि के रूप में जनता के बीच उपस्थित हुए। उन्होंने अपनी प्रतिभा और प्रचंड ज्ञान की बदौलत जनसाधारण के बीच लोकप्रियता हासिल की। उन्होंने अपने ज्ञान और तर्क से तत्कालीन समाज व व्यवस्था को बेहद प्रभावित किया तथा उसे परिवर्तित करने एवं समाज को एक नयी दिषा प्रदान करने में अपना योगदान दिया।

दिनांक :– 08/04/2020 **– डॉ. महेश प्रसाद सिन्हा**